Kundalini Sadhana (कुण्डलिनी-साधना)

कुण्डलिनी शक्ति क्या है?
योग कुण्डल्युपनिषद् में कुण्डलिनी का वर्णन इस तरह किया गया है- ´कुण्डले अस्या´ स्त: इति: कुण्डलिनी। दो कुण्डल वाली होने के कारण पिण्डस्थ उस शक्ति प्रवाह को कुण्डलिनी कहते हैं। दो कुण्डल अर्थात इड़ा और पिंगला। बाईं ओर से बहने वाली नाड़ी को ´इड़ा´ और दाहिनी ओर से बहने वाली नाड़ी को ´पिगला´ कहते हैं। इन दोनों नाडियों के बीच जिसका प्रवाह होता है, उसे सुषुम्ना नाड़ी कहते हैं। इस सुषुम्ना नाड़ी के साथ और भी नाड़ियां होती है। जिसमें एक चित्रणी नाम की नाड़ी भी होती है। इस चित्रणी नाम की नाड़ी में से होकर कुण्डलिनी शक्ति प्रवाहित होती है, इसलिए सुषुम्ना नाड़ी की दोनों ओर से बहने वाली उपयुक्त 2 नाड़ियां ही कुण्डलिनी शक्ति के 2 कुण्डल हैं।

कुण्डलिनी यज्ञ का विशेष वर्णन करते हुए मुण्डकोपनिषद के २/१/८ संदर्भ में कहा गया है-
"सत्तप्राणी उसी से उत्पन्न हुए । अग्नि की सात ज्वालाएँ उसी से प्रकट हुईं । यही सप्त समिधाएँ हैं, यही सात हवि हैं । इनकी ऊर्जा उन सात लोकों तक जाती जिनका सृजन परमेश्वर ने उच्च प्रयोजनों के लिए किया गया है ।"

उपनिषद् में कुण्डलिनी शक्ति के स्वरूप का वर्णन-
मूलाधारस्य वहवयात्म तेजोमध्ये व्यवस्थिता।
जीवशक्ति: कुण्डलाख्या प्राणाकारण तैजसी।।

अर्थात कुण्डलिनी मूलाधार चक्र में स्थित आत्माग्नी तेज के मध्य में स्थित है। वह जीवनी शक्ति है। तेज और प्राणाकार है।

कुण्डलिनी शक्ति का ज्ञानार्णव तंत्र में वर्णन इस प्रकार किया गया है-
मूलाधारे मूलविद्द्या विद्युत्कोटि समप्रभासम्।
सूर्यकटि प्रतीकाशां चन्द्रकोटि द्रवां प्रिये।।

अर्थात मूलाधार चक्र में विद्युत प्रकाश ही करोड़ों किरणों वाला, करोड़ों सूर्यो और चन्द्रमाओं के प्रकाश के समान, कमल की डण्डी के समान अविच्छिन्न तीन घेरे डाले हुए मूल विद्या रूपिणी कुण्डलिनी स्थित है। वह कुण्डलिनी परम प्रकाशमय है, अविच्छिन्न शक्तिधारा है और तेजोधारा है।

घेरण्ड संहिता के अनुसार-
घेरण्ड संहिता में कुण्डलिनी को ही आत्मशक्ति या दिव्य शक्ति व परम देवता कहा गया है।

मूलाधारे आत्मशक्ति: कुण्डली परदेवता।
शमिता भुजगाकारा, सार्धत्रिबलयान्विता।।

अर्थात मूलाधार में परम देवी आत्माशक्ति कुण्डलिनी तीन बलय वाली सर्पिणी के समान कुण्डल मारकर सो रही है।

महाकुण्डलिनी प्रोक्त: परब्रह्म स्वरूपिणी।
शब्दब्रह्ममयी देवी एकाऽनेकाक्षराकृति:।।

अर्थात कुण्डलिनी शक्ति परम ब्रह्मा स्वरूपिणी, महादेवी, प्राण स्वरूपिणी तथा एक और अनेक अक्षरों के मंत्रों की आकृति में माला के समान जुड़ी हुई बतायी जाती है।

कन्दोर्ध्व कुण्डली शक्ति: सुप्ता मोक्षाय योगिनाम्।
बन्धनाय च मूढ़ानां यस्तां वेति से योगिवित्।।

अर्थात कन्द के ऊपर कुण्डलिनी शक्ति अवस्थित है। यह कुण्डलिनी शक्ति सोई हुई अवस्था में होती है। इस कुण्डलिनी शक्ति के द्वारा ही योगिजनों को मोक्ष प्राप्त होता है। सुख के बन्धन का कारण भी कुण्डलिनी है। जो कुण्डलिनी शक्ति को अनुभाव पूर्ण रूप से कर पाता है, वही सच्चा योगी होता है।

सप्त लोकों का देवी भागवत में अन्य प्रकार से उल्लेख हुआ है-
उसमें भूः में धरित्री भुवः में वायु स्वः में तेजस महः में महानता, जनः में जनसमुदाय, तपः में तपश्चर्या एवं सत्य में सिद्धवाण्-वाक सिद्धि रूप सात शक्तियाँ समाहित बतायी गयी हैं ।

इस प्रकार कुण्डलिनी योग के अंतर्गत चक्र समुदाय में वह सभी कुछ आ जाता है, जिसकी कि भौतिक और आत्मिक प्रयोजनों के लिए आवश्यकता पड़ती है ।

मानवी काया को एक प्रकार से भूलोक के समान माना गया है। इसमें अवस्थित मूलाधार चक्र को पृथ्वी की तथा सहस्रार को सूर्य की उपमा दी गई है । दोनों के बीच चलने वाले आदान-प्रदान माध्यम को मेरुदण्ड कहा गया है । ब्रह्मरंध्र ब्रह्मण्ड का प्रतीक है । ठीक इसी प्रकार सहस्रार लोक ब्रह्मण्डीय चेतना का अवतरण केन्द्र है और इस महान् भण्डागार में से मूलाधार को जिस कार्य के लिए जितनी मात्रा में जिस स्तर की शक्ति कि आवश्यक्ता होती है उसकी पूर्ति लगातार होती रहती है ।

कुण्डलिनी प्रसंग योग वशिष्ठ, योग चूड़ामणि, देवी भवगत्, शारदा तिलक, शान्डिल्योसपनिषद मुक्ति-कोपनिषद, हठयोग संहिता, कुलार्णन तंत्र, योगिनी तंत्र बिन्दूपनिषद, रुद्र यामल तंत्र सौन्दर्य लहरी आदि गंथों में विस्तार पूर्वक दिया गया है ।

यही कारण है कि ऋग्वेद में ऋषि कहते हैं-
हे "प्राणाग्नि! मेरे जीवन में ऊषा बनकर प्रकटों अज्ञान का अंधकार दूर करों, ऐसा बल प्रदान करो जिससे देव शक्तियाँ खिंची चली आएँ ।"

त्रिशिखिब्रहोपनिषद में शास्त्रकार ने कहा है-
"योग साधना द्वारा जगाई हुई कुण्डलिनी बिजली के समान लडपती और चमकती है । उससे जो है, सोया सा जागता है । जो जागता है, वह दौड़ने लगता है ।"

महामंत्र में वर्णन आता है-
"जाग्रत हुई कुण्डलिनी असीम शक्ति का प्रसव करती है । उससे नाद बिन्दू, कला के तीनों अभ्यास स्वयंमेव सध जाते हैं । परा, पश्यन्ति, मध्यमा और बैखरी चारों वाणियाँ मुखर हो उठती हैं । इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति में उभार आता है । शरीर-वीणा के सभी तार क्रमबद्ध हो जाते हैं और मधुर ध्वनि में बजते हुए अन्तराल को झंकृत करते हैं । शब्दब्रह्म की यह सिद्धि मनुष्य को जीवनमुक्त कर देवात्मा बना देती है । "

शरीर में कुण्डलिनी की अवस्था
जननेन्द्रिय के मूल में या लिंग उपस्थ में नाड़ियों का एक गुच्छा है। योग शास्त्रों में इसी को “कन्द” कहा जाता है। इसी पर कुण्डलिनी गहरी नींद में जन्म-जन्मान्तर से सो रही होती है।

कुण्डलो कुटिलाकारा सर्पवत् परिकीर्तिता।
सा शक्तिश्चालिता येन, स युक्तों नात्र संशय।।

अर्थात कुण्डलिनी को सर्प के आकार की कुटिल कहा गया है। जिस तरह सांप कुण्डली मारकर सोता है, उसी प्रकार कुण्डलिनी शक्ति भी आदिकाल से ही मनुष्य के अन्दर सोई हुई रहती है।

यावत्सा निद्रिता देहे तावज्जीव: पयुयेथा।
ज्ञान न जायते तावत् कोटि योगविधेरपि।।

अर्थात जब तक कुण्डलिनी शक्ति मनुष्य के अन्दर सोई हुई अवस्था में रहती है, तब तक मनुष्य परिस्थिति के अधीन रहता है। ऐसे व्यक्ति का आचरण पशुओं के समान होता है। ऐसे व्यक्ति दीन-हीन जीवन यापन करते हैं, तथा उनका रहन-सहन, भावों और विचारों, आहार-विहार आदि में आत्म विश्वास, धैर्य, सूझ-बूझ, उमंग, उत्साह, उल्लास, दृढ़ता, स्थिरता, एकाग्रता, कार्य कुशलता, उदारता और ह्रदय विशालता जैसे गुणों का अभाव होता है। ऐसे व्यक्ति अनेक योग साधना, पूजा-पाठ आदि करके भी अपने ब्रह्माज्ञान विवेक को प्राप्त नहीं कर पाता।

मूलाधारे प्रसुप्त साऽऽमशक्ति उन्निद्रता-
विशुद्धे तिष्ठति मुक्तिरूपा पराशक्ति:।

अर्थात वह प्रबल आत्मशक्ति मूलाधार में सो रही है। उसका प्रयोग किसी बड़े या चमत्कारी कार्य में न होने से वह अपमानित व्यक्ति की तरह शिथिल और गतिहीन बनी हुई है। व्यक्ति के अन्दर जागी हुई इच्छाशक्ति के महान उद्देश्यों की पूर्ति में नियोजित वही शक्ति पराशक्ति के रूप में विराजती है।

कुण्डलिनी जागृत करने का कारण

शरीर के अन्दर कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होने से शरीर के अन्दर मौजूद दूषित कफ, पित्त, वात आदि से उत्पन्न होने वाले विकार नष्ट हो जाते हैं। इसके जागरण से मनुष्य के अन्दर काम, क्रोध, लोभ, मोह जैसे दोष, आदि खत्म हो जाते हैं। इस शक्ति का जागरण होने से यह अपनी सोई हुई अवस्था को त्याग कर सीधी हो जाती है और विद्युत तरंग के समान कम्पन के साथ इड़ा, पिंगला नाड़ियों को छोड़कर सुषुम्ना से होते हुए मस्तिष्क में पहुंच जाती है।

कुण्डल्येव भवेच्छक्तिस्तां तु सचालयेत बुध:।
स्पश्यनादाभ्रवोर्मध्य, शक्तिचालनमुच्चते।।

अर्थात अपने अन्दर आंतरिक ज्ञान व अत्याधिक शक्ति की प्राप्ति के लिए सभी मनुष्यों को चाहिए कि वह अपने अन्दर सोई हुई कुण्डलिनी (आत्मशक्ति) का जागरण करें, उसे कार्यशील बनाएं! प्राणायाम के द्वारा जब मूलाधार से स्फूर्ति तरंग की तरह ऊर्जा शक्ति उठकर मस्तिष्क में आती हुई महसूस होने लगे तो समझना चाहिए कि कुण्डलिनी शक्ति जागृत हो चुकी है।

ज्ञेया शक्तिरियं विश्नोनिर्भया स्वर्णभ: स्वरा।

अर्थात शरीर में उत्पन्न होने वाली इस कुण्डलिनी शक्ति को स्वर्ण के समान सुन्दर विष्णु की निर्भय शक्ति ही समझना चाहिए। यही शक्ति आत्मशक्ति, जीवशक्ति आदि नाम से भी जाना जाता है। यही ईश्वरीय शक्ति भी है, प्राणशक्ति और कुण्डलिनी शक्ति भी है। मनुष्य के शरीर में मौजूद कुण्डलिनी शक्ति और पारलौकिक शक्ति दोनों एक ही शक्ति के अलग-अलग रूप हैं।

पतांजलि द्वारा रचित ´योग दर्शन´ शास्त्र के अनुसार-

पतांजलि द्वारा रचित ´योग दर्शन´ शास्त्र के साधनापद में कुण्डलिनी शक्ति के जागरण के अनेकों उपाय बताए गए है। मंत्र ग्रन्थों में जितने योगों का वर्णन है, वे सभी कुण्डलिनी जागरण की ही साधना है। महाबन्ध, महावेध, महामुद्रा, खेचरी मुद्रा, विपरीत करणी मद्रा, अश्विनी मुद्रा, योनि मुद्रा, शक्ति चालिनी मुद्रा, आदि कुण्डलिनी जागरण में सहायता करते हैं। इसमें प्राणायाम के द्वारा कुण्डलिनी को जागरण करना और उसे सुषुम्ना में लाना कुण्डलिनी जागरण का सबसे अच्छा उपाय है। प्राणायाम के द्वारा कुछ समय में ही कुण्डलिनी शक्ति का जागरण कर उसके लाभों को प्राप्त किया जा सकता है।

प्राणायाम से केवल कुण्डलिनी शक्ति ही जागृत ही नहीं होती बल्कि इससे अनेकों लाभ भी प्राप्त होते हैं। ´योग दर्शन´ के अनुसार प्राणायाम के अभ्यास से ज्ञान पर पड़ा हुआ अज्ञान का पर्दा नष्ट हो जाता है। इससे मनुष्य भ्रम, भय, चिंता, असमंजस्य, मूल धारणाएं और अविद्या व अन्धविश्वास आदि नष्ट होकर ज्ञान, अच्छे संस्कार, प्रतिभा, बुद्धि-

विवेक आदि का विकास होने लगता है। इस साधना के द्वारा मनुष्य अपने मन को जहां चाहे वहां लगा सकता है। प्राणायाम के द्वारा मन नियंत्रण में रहता है। इससे शरीर, प्राण व मन के सभी विकार नष्ट हो जाते हैं। इससे शारीरिक क्षमता व शक्ति का विकास होता है। प्राणायाम के द्वारा प्राण व मन को वश में करने से ही व्यक्ति आश्चर्यजनक कार्य को कर सकने में समर्थ होता है। प्राणायाम आयु को बढ़ाने वाला, रोगों को दूर करने वाला, वात-पित्त-कफ के विकारों को नष्ट करने वाला होता है। यह मनुष्य के अन्दर ओज-तेज और आकर्षण को बढ़ाता है। यह शरीर में स्फूर्ति, लचक, कोमल, शांति और सुदृढ़ता लाता है। यह रक्त को शुद्ध करने वाला है, चर्म रोग नाशक है। यह जठराग्नि को बढ़ाने वाला, वीर्य दोष को नष्ट करने वाला होता है।

प्राणायाम के द्वारा वीर्य और प्राण के ऊर्ध्वगमन से बुद्धि तंत्र के बन्द कोष खुलते है, साथ ही शरीर की नस-नस में अत्यंत शक्ति, साहस का संचार होने से क्रियाशीलता का विकास भी होता है।

कुंडलिनी जागरण का अर्थ है

मनुष्य को प्राप्त महानशक्ति को जाग्रत करना। यह शक्ति सभी मनुष्यों में सुप्त पड़ी रहती है। कुण्डली शक्ति उस ऊर्जा का नाम है जो हर मनुष्य में जन्मजात पायी जाती है। इसे जगाने के लिए प्रयास या साधना करनी पड़ती है।

कुंडली जागरण के लिए साधक को शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक स्तर पर साधना या प्रयास करना पड़ता है। जप, तप, व्रत-उपवास, पूजा-पाठ, योग आदि के माध्यम से साधक अपनी शारीरिक एवं मानसिक, अशुद्धियों, कमियों और बुराइयों को दूर कर सोई पड़ी शक्तियों को जगाता है। अत: हम कह सकते हैं कि विभिन्न उपायों से अपनी अज्ञात, गुप्त एवं सोई पड़ी शक्तियों का जागरण ही कुंडली जागरण है।

योग और अध्यात्म में इस कुंडलीनी शक्ति का निवास रीढ़ की हड्डी के समानांतर स्थित छः चक्रों में से प्रथम चक्र मूलाधार के नीचे माना गया है। यह रीढ की हड्डी के आखिरी हिस्से के चारों ओर साढे तीन आँटे लगाकर कुण्डली मारे सोए हुए सांप की तरह सोई रहती है।

आध्यात्मिक भाषा में इन्हें षट्-चक्र कहते हैं।

ये चक्र क्रमश:

इस प्रकार है:- मूलधार-चक्र, स्वाधिष्ठान-चक्र, मणिपुर-चक्र, अनाहत-चक्र, विशुद्ध-चक्र, आज्ञा-चक्र। साधक क्रमश: एक-एक चक्र को जाग्रत करते हुए, आज्ञा-चक्र तक पहुंचता है। मूलाधार-चक्र से प्रारंभ होकर आज्ञाचक्र तक की सफलतम यात्रा ही कुण्डलिनी जागरण कहलाता है।

षट्-चक्र एक प्रकार की सूक्ष्म ग्रंथियां है। इन चक्र ग्रंथियों में जब साधक अपने ध्यान को एकाग्र करता है तो उसे वहां की सूक्ष्म स्थिति का बड़ा विचित्र अनुभव होता है। इन चक्रों में विविध शक्तियां समाहित होती है। उत्पादन, पोषण, संहार, ज्ञान, समृद्धि, बल आदि। साधक जप के द्वारा ध्वनि तरंगों को चक्रों तक भेजता है। इन पर ध्यान एकाग्र करता है। प्राणायम द्वारा चक्रों को उत्तेजित करता है। आसनों द्वारा शरीर को इसके लिए उपयुक्त बनाता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विभिन्न शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक प्रयासों के द्वारा साधक, शक्ति के केंद्र इन चक्रों को जाग्रत करता है।

वैदिक ग्रन्थों में लिखा है कि मानव शरीर आत्मा का भौतिक घर मात्र है। आत्मा सात प्रकार के कोषों से ढकी हुई है:- १- अन्नमय कोष (द्रव्य, भौतिक शरीर के रूप में जो भोजन करने से स्थिर रहता है), २- प्राणामय कोष (जीवन शक्ति), ३- मनोमय कोष (मस्तिष्क जो स्पष्टतः बुद्धि से भिन्न है), ४- विज्ञानमय कोष (बुद्धिमत्ता), ५- आनन्दमय कोष (आनन्द या अक्षय आनन्द जो शरीर या दिमाग से सम्बन्धित नहीं होता), ६- चित्-मय कोष (आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता) तथा ७- सत्-मय कोष (अन्तिम अवस्था जो अनन्त के साथ मिल जाती है)। मनुष्य के आध्यात्मिक रूप से पूर्ण विकसित होने के लिये सातों कोषों का पूर्ण विकास होना अति आवश्यक है।

साधक की कुण्डलिनी जब चेतन होकर सहस्त्रार में लय हो जाती है, तो इसी को मोक्ष कहा गया है।

कुण्डलिनी योग के अंतर्गत शक्तिपात विधान का वर्णन अनेक ग्रंथों में मिलता है जैसे-
योग वशिष्ठ, तेजबिन्दूनिषद्, योग चूड़ामणि, ज्ञान संकलिनी तंत्र, शिव पुराण, देवी भागवत, शाण्डिपनिषद, मुक्तिकोपनिषद, हठयोग संहिता, कुलार्णव तंत्र, योगनी तंत्र, घेरंड संहिता, कंठ श्रुति ध्यान बिन्दूपनिषद, रुद्र यामल तंत्र, योग कुण्डलिनी उपनिषद्, शारदा तिलक आदि ग्रंथों में इस विद्या के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है ।

तैत्तरीय आरण्यक में चक्रों को देवलोक एवं देव संस्थान कहा गया । शंकराचार्य कृत आनन्द लहरी के १७ वें श्लोक में भी ऐसा ही प्रतिपादन है ।

योग दर्शन समाधिपाद का ३६वाँ सूत्र है-
'विशोकाया ज्योतिष्मती'
इसमें शोक संतापों का हरण करने वाली ज्योति शक्ति के रूप में कुण्डलिनी शक्ति की ओर संकेत है।

हमारे ऋषियों ने गहन शोध के बाद इस सिद्धान्त को स्वीकार किया कि जो ब्रह्माण्ड में है, वही सब कुछ पिण्ड (शरीर) में है। इस प्रकार "मूलाधार-चक्र" से "कण्ठ पर्यन्त" तक का जगत "माया" का और "कण्ठ" से लेकर ऊपर का जगत "परब्रह्म" का है।

मूलाद्धाराद्धि षट्चक्रं शक्तिरथानमूदीरतम् ।
कण्ठादुपरि मूर्द्धान्तं शाम्भव स्थानमुच्यते॥ -वराहश्रुति

अर्थात मूलाधार से कण्ठपर्यन्त शक्ति का स्थान है । कण्ठ से ऊपर से मस्तक तक शाम्भव स्थान है ।

मूलाधार से सहस्रार तक की यात्रा को ही महायात्रा कहते हैं । योगी इसी मार्ग को पूरा करते हुए परम लक्ष्य तक पहुँचते हैं । जीव, सत्ता, प्राण, शक्ति का निवास जननेन्द्रिय मूल में है । प्राण उसी भूमि में रहने वाले रज वीर्य से उत्पन्न होते हैं । ब्रह्म सत्ता का निवास ब्रह्मलोक (ब्रह्मरन्ध्र) में माना गया है । यही द्युलोक, देवलोक, स्वर्गलोक है। आत्मज्ञान (ब्रह्मज्ञान) का सूर्य इसी लोक में निवास करता है ।

पतन के गर्त में पड़ी क्षत-विक्षत आत्म सत्ता अब उर्ध्वगामी होती है तो उसका लक्ष्य इसी ब्रह्मलोक (सूर्यलोक) तक पहुँचना होता है । योगाभ्यास का परम पुरुषार्थ इसी निमित्त किया जाता है । कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य यही है ।

आत्मोत्कर्ष की महायात्रा जिस मार्ग से होती है उसे मेरुदण्ड या सुषुम्ना कहते हैं ।

मेरुदण्ड को राजमार्ग या महामार्ग कहते हैं । इसे धरती से स्वर्ग पहुँचने का देवयान मार्ग कहा गया है । इस यात्रा के मध्य में सात लोक हैं । इस्लाम धर्म के सातवें आसमान पर खुदा का निवास माना गया है । ईसाई धर्म में भी इससे मिलती-जुलती मान्यता है । हिन्दू धर्म के भूः, भुवः, स्वः, तपः, महः, सत्यम् यह सात-लोक प्रसिद्ध है । आत्मा और परमात्मा के मध्य इन्हें विराम स्थल माना गया है ।

षट्-चक्र-भेदन-
षट्-चक्र-भेदन विधान कितना उपयोगी एवं सहायक है इसकी चर्चा करते हुए 'आत्म विवेक' नामक साधना ग्रंथ में कहा गया है कि-
गुदालिङान्तरे चक्रमाधारं तु चतुर्दलम्।
परमः सहजस्तद्वदानन्दो वीरपूर्वकः॥
योगानन्दश्च तस्य स्यादीशानादिदले फलम्।
स्वाधिष्ठानं लिंगमूले षट्पत्रञ्त्र् क्रमस्य तु॥
पूर्वादिषु दलेष्वाहुः फलान्येतान्यनुक्रमात्।
प्रश्रयः क्रूरता गर्वो नाशो मूच्छर् ततः परम्॥
अवज्ञा स्यादविश्वासो जीवस्य चरतो ध्रुवम्।

नाभौ दशदलं चक्रं मणिपूरकसंज्ञकम्।
सुषुप्तिरत्र तृष्णा स्यादीष्र्या पिशुनता तथा॥
लज्ज् भयं घृणा मोहः कषायोऽथ विषादिता।
लौन्यं प्रनाशः कपटं वितर्कोऽप्यनुपिता॥
आश्शा प्रकाशश्चिन्ता च समीहा ममता ततः।
क्रमेण दम्भोवैकल्यं विवकोऽहंक्वतिस्तथा॥
फलान्येतानि पूर्वादिदस्थस्यात्मनों जगुः।
कण्ठेऽस्ति भारतीस्थानं विशुद्धिः षोडशच्छदम्॥
तत्र प्रणव उद्‌गीथो हुँ फट् वषट् स्वधा तथा।
स्वाहा नमोऽमृतं सप्त स्वराः षड्‌जादयो विष॥
इति पूर्वादिपत्रस्थे फलान्यात्मनि षोडश॥

(1) गुदा और लिंग के बीच चार दल (पंखुड़ियों) वाला 'आधार चक्र' है। वहाँ वीरता और आनन्द भाव का वास है।

(2) इसके बाद स्वाधिष्ठान-चक्र लिंग मूल में है। इसके छः दल हैं। इसके जाग्रत होने पर क्रूरता, गर्व, आलस्य, प्रमाद, अवज्ञा, अविश्वास आदि दुर्गणों का नाश होता है।

चक्रों की जागृति मनुष्य के गुण, कर्म, स्वभाव को प्रभावित करती है। स्वाधिष्ठान की जागृति से मनुष्य अपने में नव शक्ति का संचार अनुभव करता है। उसे बलिष्ठता बढ़ती प्रतीत होती है। श्रम में उत्साह और गति में स्फूर्ति की अभिवृद्धि का आभास मिलता है।

(3) नाभि में दस दल वाला मणिपूर-चक्र है। यह प्रसुप्त पड़ा रहे तो तृष्णा, ईर्ष्या, चुगली, लज्जा, भय, घृणा, मोह, आदि कषाय-कल्मष मन में जड़ जमाये रहते हैं।

मणिपूर चक्र से साहस और उत्साह की मात्रा बढ़ जाती है। संकल्प दृढ़ होते हैं और पराक्रम करने के हौसले उठते हैं। मनोविकार स्वयंमेव घटते जाते हैं और परमार्थ प्रयोजनों में अपेक्षाकृत अधिक रस मिलने लगता है।

(4) हृदय स्थान में अनाहत-चक्र है। यह बारह दल वाला है। यह सोता रहे तो लिप्सा, कपट, तोड़-फोड़, कुतर्क, चिन्ता, मोह, दम्भ, अविवेक तथा अहंकार से साधक भरा रहेगा। इसके जागरण होने पर यह सब दुर्गुण हट जायेंगे।

अनाहत चक्र की महिमा ईसाई धर्म में सबसे ज्यादा मानी जाती है। हृदय स्थान पर कमल के फूल की भावना करते हैं और उसे महाप्रभु ईसा का प्रतीक 'आईचीन' कनक कमल मानते हैं। भारतीय योगियों की दृष्टि से यह भाव संस्थान है। कलात्मक उमगें-रसानुभुति एवं कोमल संवेदनाओं का उत्पादक स्रोत यही है। बुद्धि की वह परत जिसे विवेक-शीलता कहते हैं। आत्मीयता का विस्तार, सहानुभूति एवं उदार सेवा, सहाकारिता, इस अनाहत चक्र से ही उद्भूत होते हैं।

(5) कण्ठ में विशुद्ध-चक्र है। यह सरस्वती का स्थान है। यह सोलह दल वाला है। यहाँ सोलह कलाएँ तथा सोलह विभूतियाँ विद्‌यमान है।

कण्ठ में विशुद्ध चक्र है। इसमें बहिरंग स्वच्छता और अंतरंग पवित्रता के तत्त्व रहते हैं। दोष व दुर्गुणों के निराकरण की प्रेरणा और तदनुरूप संघर्ष क्षमता यहीं से उत्पन्न होती है। मेरुदण्ड में कंठ की सीध पर अवस्थित विशुद्ध चक्र, चित्त संस्थान को प्रभावित करता है। तदनुसार चेतना की अति महत्वपूर्ण परतों पर नियंत्रण करने और विकसित एवं परिष्कृत कर सकने के सूत्र हाथ में आ जाते हैं। नादयोग के माध्यम से दिव्य श्रवण जैसी कितनी ही परोक्षानुभूतियाँ विकसित होने लगती हैं।

(6) भ्रू-मध्य में आज्ञा चक्र है। यहाँ- ॐ, उद्‌गीय, हूँ, फट, विषद, स्वधा, स्वहा, सप्त स्वर आदि का वास है। आज्ञा चक्र के जागरण होने से यह सभी शक्तियाँ जाग जाती हैं।

(7) सहस्रार मस्तिष्क के मध्य भाग में है। शरीर संरचना में इस स्थान पर अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथियों का अस्तित्व है। वहाँ से ऊर्जा का स्वयंभू प्रवाह होता है। यह ऊर्जा मस्तिष्क के अगणित केन्द्रों की ओर जाती/दौड़ती हैं। इसमें से छोटी-छोटी किरणे निकलती रहती हैं। उनकी संख्या की सही गणना तो नहीं हो सकती, पर वे हजारों में होती है। इसलिए इस चक्र के लिये 'सहस्रार' शब्द प्रयोग में लाया जाता है। सहस्रार चक्र का नामकरण इसी आधार पर हुआ है।

यह संस्थान ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ सम्पर्क साधने में अग्रणी है, इसलिए उसे ब्रह्मरन्ध्र या ब्रह्मलोक भी कहते हैं। हिन्दू धर्मानुयायी इस स्थान पर शिखा रखते हैं।

कबीर साहिब ने अपनी निम्नलिखित प्रसिद्ध रचना 'कर नैनों दीदार महल में प्यारा है' में सब कमलों का वर्णन विस्तार पूर्वक इस प्रकार किया है-

कर नैनो दीदार महल में प्यारा है ॥टेक॥
काम क्रोध मद लोभ बिसारो, सील संतोष छिमा सत धारो ।
मद्य मांस मिथ्या तजि डारो, हो ज्ञान घोड़े असवार, भरम से न्यारा है ॥1॥
धोती नेती वस्ती पाओ, आसन पद्म जुगत से लाओ ।
कुंभक कर रेचक करवाओ, पहिले मूल सुधार कारज हो सारा है ॥2॥
मूल कँवल दल चतुर बखानो, कलिंग जाप लाल रंग मानो ।
देव गनेस तह रोपा थानो, रिध सिध चँवर ढुलारा है ॥3॥
स्वाद चक्र षट्दल बिस्तारो, ब्रह्मा सावित्री रूप निहारो ।
उलटि नागिनी का सिर मारो, तहां शब्द ओंकारा है ॥4॥
नाभी अष्टकँवल दल साजा, सेत सिंहासन बिस्नु बिराजा ।
हिरिंग जाप तासु मुख गाजा, लछमी सिव आधारा है ॥5॥
द्वादस कँवल हृदय के माहीं, जंग गौर सिव ध्यान लगाई ।
सोहं शब्द तहां धुन छाई, गन करै जैजैकारा है ॥6॥
षोड़श दल कँवल कंठ के माहीं, तेहि मध बसे अविद्या बाई ।
हरि हर ब्रह्मा चँवर ढुराई, जहं शारिंग नाम उचारा है ॥7॥
ता पर कंज कँवल है भाई, बग भौरा दुह रूप लखाई ।
निज मन करत तहां ठुकराई, सौ नैनन पिछवारा है ॥8॥
कंवलन भेद किया निर्वारा, यह सब रचना पिण्ड मंझारा ।
सतसंग कर सतगुरु सिर धारा, वह सतनाम उचारा है ॥9॥
आंख कान मुख बंद कराओ अनहद झिंगा सब्द सुनाओ ।
दोनों तिल इकतार मिलाओ, तब देखो गुलजारा है ॥10॥
चंद सूर एकै घर लाओ, सुषमन सेती ध्यान लगाओ ।
तिरबेनी के संघ समाओ, भोर उतर चल पारा है ॥11॥
घंटा संख सुनो धुन दोई सहस कँवल दल जगमग होई ।
ता मध करता निरखो सोई, बंकनाल धस पारा है ॥12॥
डाकिन साकिनी बहु किलकारें, जम किंकर धर्म दूत हकारें ।
सत्तनाम सुन भागें सारे, जब सतगुरु नाम उचारा है ॥13॥
गगन मंडल विच उर्धमुख कुइआ, गुरुमुख साधू भर भर पीया ।
निगुरे प्यास मरे बिन कीया, जा के हिये अंधियारा है ॥14॥
त्रिकुटी महल में विद्या सारा, घनहर गरजें बजे नगारा ।
लाला बरन सूरज उजियारा, चतुर कंवल मंझार सब्द ओंकारा है ॥15॥
साध सोई जिन यह गढ़ लीना, नौ दरवाजे परगट चीन्हा ।
दसवां खोल जाय जिन दीन्हा, जहां कुंफुल रहा मारा है ॥16॥
आगे सेत सुन्न है भाई, मानसरोवर पैठि अन्हाई ।

हंसन मिल हंसा होइ जाई, मिलै जो अमी अहारा है ॥17॥
किंगरी सारंग बजै सितारा, अच्छर ब्रह्म सुन्न दरबारा ।
द्वादस भानु हंस उजियारा, खट दल कंवल मंझार सब्द रारंकारा है ॥18॥
महासुन्न सिंध बिषमी घाटी, बिन सतगुर पावै नाही बाटी ।
ब्याघर सिंह सरप बहु काटी, तहं सहज अचिंत पसारा है ॥19॥
अष्ट दल कंवल पारब्रह्म भाई, दाहिने द्वादस अचिंत रहाई ।
बायें दस दल सहज समाई, यूं कंवलन निरवारा है ॥20॥
पांच ब्रह्म पांचों अंड बीनो, पांच ब्रह्म निःअक्षर चीन्हो ।
चार मुकाम गुप्त तहं कीन्हो, जा मध बंदीवान पुरुष दरबारा है ॥21॥
दो पर्बत के संध निहारो, भंवर गुफा ते संत पुकारो ।
हंसा करते केल अपारो, तहां गुरन दरबारा है ॥22॥
सहस अठासी दीप रचाये, हीरे पन्ने महल जड़ाये ।
मुरली बजत अखंड सदाये, तहं सोहं झुनकारा है ॥23॥
सोहं हद्द तजी जब भाई, सत्त लोक की हद पुनि आई ।
उठत सुगंध महा अधिकाई, जा को वार न पारा है ॥24॥
षोड़स भानु हंस को रूपा, बीना सत धुन बजै अनूपा ।
हंसा करत चंवर सिर भूपा, सत्त पुरुष दरबारा है ॥25॥
कोटिन भानु उदय जो होई, एते ही पुनि चंद्र लखोई ।
पुरुष रोम सम एक न होई, ऐसा पुरुष दीदारा है ॥26॥
आगे अलख लोक है भाई, अलख पुरुष की तहं ठकुराई ।
अरबन सूर रोम सम नाहीं, ऐसा अलख निहारा है ॥27॥
ता पर अगम महल इक साजा, अगम पुरुष ताहि को राजा ।
खरबन सूर रोम इक लाजा, ऐसा अगम अपारा है ॥28॥
ता पर अकह लोक हैं भाई, पुरुष अनामी तहां रहाई ।
जो पहुँचा जानेगा वाही, कहन सुनन से न्यारा है ॥29॥
काया भेद किया निर्बारा, यह सब रचना पिंड मंझारा ।
माया अवगति जाल पसारा, सो कारीगर भारा है ॥30॥
आदि माया कीन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिंड दिखाई ।
अवगति रचन रची अंड माहीं, ता का प्रतिबिंब डारा है ॥31॥
सब्द बिहंगम चाल हमारी, कहैं कबीर सतगुर दइ तारी ।
खुले कपाट सब्द झुनकारी, पिंड अंड के पार सो देस हमारा है ॥32॥

कुण्डलिनी शक्ति

अभी तक हमने जितना समझा है, वह सब शास्त्रों के अनुसार समझा है कि कुण्डलिनी शक्ति क्या है और कैसे काम करती है। अब अपनी बात कुण्डलनी शक्ति इन्सान के शरीर में उस परमात्मा द्वारा दी गई समस्त शक्तियों में से सबसे ज्यादा शक्तिशाली एवं अति गुप्त विद्या है। कुण्डलिनी शक्ति के ऊपर प्रारम्भ से ही अनेको बार, अनेको व्याखायें दी जा चुकी है। तथा अनेको बार इसके ऊपर शास्त्रार्थ हो चुका है। आज के समय में साधकों का सम्प्रदाय दो हिस्सों में बट चुका है। जो साधक संत मत को मानते हैं, वे कुण्डलिनी शक्ति से दूर रहते है, अर्थात कुण्डलनी शक्ति को जगाना और इसके बारे में जानना वो आवश्यक नहीं समझते। उनके अनुसार आज्ञा चक्र पर ध्यान लगाना और नाम का जाप करना, इसको ही वो प्रधान मानते है। ये साधक आज्ञा चक्र से नीचे के चक्रो को कोई भी महत्व देना पसन्द नहीं करते। इनके अनुसार नीचे के चक्रो पर साधना करने का मतलब है- समय की बरबादी। इनके अनुसार कुन्डलिनी शक्ति जाग्रत हो कर आज्ञा चक्र पर ही पहुँचती है। इसलिये क्यो न आज्ञा चक्र से ही यात्रा शुरू की जाये। आज्ञा चक्र से साधना करने का कितना फायदा होता है, यह तो वही साधक जाने।

किन्तु हमारी दृष्टी में ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि बिना कुन्डलिनी शक्ति के जाग्रत हुऐ आज्ञा चक्र का जाग्रत होना असम्भव है। क्योंकि सभी चक्रो को जाग्रत करने के मूल में कुण्डलिनी शक्ति का महत्वपूर्ण योगदान है। जो साधक सीधे ही आज्ञा चक्र से साधना प्रारम्भ करते है। सालों-साल बीत जाने पर भी उनकी मानसिक स्थिती और उनकी विचारधारा में तनिक/बिलकुल भी बदलाव नहीं आता। यदि उन से इस बारे में पूछा जाये तो उनके अनुसार कम-से-कम चार जन्मो में वो अपनी मुक्ति मानते है। कोई उनसे पूछने वाला हो तो कि यह जन्म तो बिताना इतना मुश्किल है। आगे के तीन जन्मो के बारे में क्या बात करें।
उन साधकों के अनुसार यदि गुरू कृपा हो तो चार जन्म में मुक्ति सम्भव है और यह साधक सिर्फ मुक्ति के लिये ही साधना करते है। गुरू और नाम जाप पर इनकी पूर्ण श्रद्धा होती है। इनमे से अधिकांश साधक नीचे के चक्रो के नाम से ही डरते है, वो कहते है कि- यदि नीचे के चक्र जाग्रत हो गये तो अनेको सिद्धियाँ की प्राप्ति होगी, जिससे कि साधक मुक्ति के मार्ग से भ्रष्ट हो सकता है और सिद्धियों के लालच में फंस कर अपने आप को खराब कर लेता है।

लेकिन जब इन साधकों की नाम और गुरू के प्रति इतनी श्रद्धा और विश्वास है, तो यह साधक कैसे भटक सकते है, क्योंकि इनका पूर्ण गुरू तो हर वक्त इनके साथ है फिर भटकाव क्यों और कैसे?

हमारी नजर में कोई माने या न माने या तो इनके गुरूओं को कुण्डलिनी शक्ति जागरण का विधान, उसके नियम आदि नहीं मालूम और यदि मालूम है तो- ये अपने शिष्यों को बताना या सिखाना नहीं चाहते, क्योंकि कुण्डलिनी जागरण की प्रकिया बहुत ही गहन और जटिल है। कुण्डलिनी जागरण के दौरान गुरू-शिष्य का साथ-साथ पुरूषार्थ करना अति आवश्यक है। मात्र प्रवचन दे कर या शास्त्रों/ग्रन्थो की काहानियाँ सुना कर या रामायण, गीता आदि का उपदेश दे कर कुण्डलिनी जागरण सम्भव नहीं है।

असल में कुण्डलिनी शक्ति के लिये पूरी मेहनत, पूर्ण आत्म-विश्वास और पूर्ण-गुरु का होना आवश्यक है। क्योंकि कुन्डलिनी शक्ति जाग्रत होने पर मात्र मोक्ष ही नहीं, भोग भी प्रदान करती है।

मोटे तोर पर आज का साधक सम्प्रदाय तीन हिसों में बटा हुआ है। ध्यान-योग, हठ-योग और तन्त्र योग। तंत्र को, साधक योग नही मानते। उनकी नजर में तंत्र या तो एक वीभत्स क्रिया है, या फिर एक चमत्कार दिखाने की विधि। हमारी नजर में तंत्र का अर्थ है- तन्+प्राण= तन से मुक्ति पाने का उपाय तंत्र है, अर्थात अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय आदि सप्त शरीरो से मुक्ति पाना और आत्मा का उस परमात्मा में पूर्ण लय होना ही तंत्र है। पूर्ण तंत्र में बिन्दू का रज से मिलन करना ही कुण्डलिनी शक्ति है, अर्थात तंत्र की सर्वोच्चय-भैरवी-साधना ही कुन्डलिनी साधना है। जैसे-जैसे साधक अपने आप को उधर्व-मुखी करना शुरू करते है। उनकी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत हो कर पूर्ण यात्रा को निकल पड़ती है। आदि शंकराचार्य ने इस कुण्डलिनी शक्ति का प्रारूप 'श्री यंत्र अर्थात श्री चक्र' को बनाया है।

बहुत ही ध्यान पुर्वक यदि हम तंत्र और संत मत का अध्ययन या विश्लेषण करे तो हमे ऐसा महसूस होगा जैसे किसी ने हमारी बुद्धि को ठग लिया हो। संत मत के अनुसार-

ब्रह्मा मरे, विष्णु मरे, मरे शंकर भगवान।
अक्षर मरे, क्षर मरे, तब प्रकटे पूर्ण भगवान॥

तंत्र के अनुसार 'श्री चक्र' में स्थित कामेश्वर और कामेश्वरी जहाँ वास करते हैं। जिस आसन पर विराजमान रहते है, उस आसन का पूर्व दिशा का पाया ब्रह्म-प्रेत है अर्थात वहाँ पर ब्रहमा को प्रेत माना गया है। पश्चिमी पाया विष्णु-प्रेत अर्थात वहाँ पर श्री हरी को प्रेत रूप में माना गया है। दक्षिण दिशा का पाया रूद्र-प्रेत अर्थात यहाँ पर शिव को मृत माना गया है। उत्तर पाया ईश्वर-प्रेत माना गया है, यहाँ पर अक्षर-ब्रह्म को मृत माना गया है। कामेश्वर और कामेश्वरी जिस फलक के उपर आसीन है, उसे सदाशिव या क्षर-ब्रह्म माना गया है। असल में कामेश्वर और कामेश्वरी कोई देवी या देवता नही है, बल्कि आत्मा-रूपी कामेश्वरी ही, परब्रह्म रूपी कामेश्वर के साथ आलिंगन बद्ध है।

जहाँ संत मत सिर्फ गुरू-तत्व का ध्यान करता है। वहीं तंत्र या हठ-योगी अनेकों प्रकार की क्रियायें करके सभी प्रकार का आंनद लेते हुऐ अपनी आत्मा रूपी प्रेयसी को प्रीतम रूपी परमात्मा से मिला देता है। हठ योग की साधना का

आधार अष्टाँग योग है। इसके अंतरगत आसन, प्रणायाम, बन्द, यम-नियम मुख्य है। साथ ही ध्यान-धारणा और समाधी के द्वारा कुण्डलिनी जागरण करना इनका ध्येय है। इन साधकों की नजर में यदि प्राण-वायु की अपान-वायु में एवं अपान-वायु की प्राण-वायु में आहुति दे दी जाये तो कुण्डलिनी जागरण सम्भव हैं। इसके लिये हठ-योगी मूल रूप से तीन बन्धो को प्रयोग करते है- मूल-बन्द, उड़ियान-बन्ध, जालन्धर-बन्ध। मूल-बन्ध अर्थात गुदा का संकोचन अर्थात अपान वायु का बाहर न निकलने देना। उड़ियान बन्ध अर्थात पूर्ण-बाह्य-कुम्भक का प्रयोग करना। जालन्धर बन्द अर्थात अपनी ठोड़ी का अपने कन्ठ से लगाना।

हमारा ध्येय किसी भी साधना को अच्छा या बुरा बताना नहीं है। जैसा की आज के समय में अधिकतर पुरूष अपने योग को बड़ा और दूसरे के योग को छोटा बताते है। साधकों की इसी विचार धारा की वजह से ही हिन्दुस्तान से अनेकों विद्याये लुप्त हो गई है।

हम एक उदाहरण दे कर समस्त साधकों को समझाने की कोशिश/प्रयास करते है। आपको समझ में आये या न आये यह हमारे बस में नहीं है। जब हम अपने बच्चे को स्कूल ले कर जाते है, तो हम हर चीज का ध्यान रखते है, जैसे की- स्कूल, उसके अध्यापक, केन्टीन और सबसे खास चीज विषय(सब्जेक्ट), बच्चों को पढ़ाये जाने वाली पुस्तकें आदि। हम अपने बच्चे को मात्र एक ही विषय नहीं दिलवाते, उसके सभी विषयों का ख्याल रखते है। साथ में ही खेलना, कुदना, नृत्य आदि का भी ध्यान रखते है। हम अपने बच्चे को सब कुछ देते है, किन्तु वह बच्चा किसी विशेष विषय की तरफ अपना विशेष ध्यान देता है, और बाकी सभी विषयों को साधारण रूप से ग्रहण करता है। अधिकतर ऐसा होता है की माँ-बाप उसे डॉक्टर, इंजीनियर आदि बनाना चाहते है, किन्तु वह बच्चा बनता कुछ ओर ही है। यदि बच्चे को स्कूल में होमवर्क ना मिले या उसकी चेकिंग न हो तो हम अपनी शिकायत ले कर मुख्य-अध्यापक के पास पहुँच जाते है।

हम अपने जीवन में हर चीज का ख्याल रखते है, हर चीज पर ध्यान देते है। किन्तु हमने साधना मार्ग को इतना सस्ता क्यों जान लिया? क्यों मान लिया?

क्या साधना मार्ग इतना सस्ता है कि, कोई भी साधारण व्यक्ति, किसी भी गुरू या संत के पास जा कर दीक्षा ग्रहण करे और नाम का जाप करे, तो क्या मुक्ति सम्भव है?

आज के गुरूओं और शिष्यों, दोनो ने मिल कर साधना और मुक्ति के मायने ही बदल दिये हैं। हमारी नजर में मात्र शब्द का रट्टा लगा कर, कहानियाँ, किताबें पढ़कर प्रवचन सुन कर मुक्ति सम्भव नहीं है।

मुक्ति एक महान और उच्च स्थान है। जहाँ पहुँच कर आत्मा सभी बंधनों से मुक्त हो जाती है।

कुण्डलिनी साधना के लिये हमे तपना पड़ता है। अत्यधिक मेहनत की जरूरत होती है। जैसे कोई व्यक्ति जब किसी विशेष परीक्षा की तैयारी करता है तो, वह तैयारी के दौरान हर तरफ से अपना ध्यान हटा कर अपनी शिक्षा पर केन्द्रित करता है। मात्र कुछ दिनो के लिये वह अपना सब सुख-सुविधा का त्याग करके अपनी शिक्षा को पूर्ण करता है, और शिक्षा पूर्ण होने पर अर्थात उसको एक अच्छी नौकरी लग जाने पर वह सन्तुष्ट हो कर सारी-उम्र सभी सुखों का भोग भोगता है। उसी प्रकार यदि एक साधक चाहे तो अपनी साधना के बल पर पूर्ण मुक्ति का फल प्राप्त कर सकता है, और मुक्त हुई जीव आत्मा शरीर में रहते हुऐ भी उन महान भोगों को भोगती है। जिस के लिये बड़े-बड़े सेठ साहुकार और धनी तरसते है।

चलते-चलते दो बात- यदि नीचे के चक्र, माया रूप हैं, जैसा कि कुछ मत या पंथों का मानना है और ऊपर के चक्र असली है तो जो चक्र(लोक) ब्रह्माण्ड में है वे क्या हैं?

चाहे नीचे के चक्र यानि लोक हो या ऊपर के चक्र हो, हैं तो शरीर के अन्दर ही।

जो अण्ड में है, वो पिण्ड में हैं और जो पिण्ड में हैं, वो अण्ड में हैं। यह कहना तो ठीक है किन्तु जब मृत्यु के

उपरान्त जब पिण्ड जलकर ख़ाक हो जाएगा तो फिर आत्मा किस चक्र या लोक में वास करेगी। क्योंकि सारी उम्र तो पिण्ड में अण्ड का आभास करके, पिण्ड के लोकों यानि चक्रो की साधना की है। लेकिन जब पिण्ड खत्म हो जाएगा, तो आत्मा को किस लोक में स्थान मिलेगा, फैसला तो तब ही होगा। क्योंकि मन के सहारे जिन लोको की साधना की थी, वे तो खत्म हो गये। अब आत्मा के सामने असली लोक अर्थात मण्डल हैं। जिनके देवों की साधना नहीं की, कभी आराधना नहीं की। क्या वे देव इस आत्मा को अपने लोक में स्थान देंगे, कदापि नहीं। मन को जितना मर्जी भरमा लो, शिष्यों को जितना मर्जी बहका लो। सत्य तो एक दिन खुल कर रहेगा, कि पिण्ड के बाहार जो है, वही सत्य है और पिण्ड के अन्दर जो है वह मिथ्या है। इसलिये कुछ संतों ने जगत को मिथ्या या माया का खेल कहा है।

जब तक सूक्ष्म-शरीर, स्थूल-शरीर से अलग हो कर ब्रह्माण्ड के सत्य लोको या मण्डलों की आराधना, सेवा, भजन, दर्शन नहीं करेगा, तब तक सब बेकार है। सूक्ष्म-शरीर को स्थूल-शरीर से अलग करने का मात्र एक ही विधान है- कुण्डलिनी साधना।

उदाहरण के तौर पर- जिस प्रकार एक छोटा बच्चा खाना पीना, बोलना-चलना, लिखना-पढ़ना आदि का प्रारम्भ तो घर से ही करता है, किन्तु कुछ समय बाद हम उसे उच्च शिक्षा हेतु अच्छे विद्यालय में प्रवेश करा देते हैं। उसी प्रकार एक साधक के लिये साधना का प्रारम्भ तो शरीर में स्थित मण्डलों से ही होता है, किन्तु जब सूक्ष्म-शरीर, स्थूल-शरीर से अलग हो जाता है, तो ब्रह्माण्ड में स्थित उच्च लोको की साधना करके, पूर्ण ब्रह्म-ज्ञान को प्राप्त करके, जीव आत्मा पूर्ण कैवल्य पद को प्राप्त कर लेती है। जिस प्रकार हमारे देश में एक अच्छे साधू या नेता की इज्जत की जाती है, उसी प्रकार उस आत्मा का भी, उच्च लोको में वैसा ही सम्मान या आदर किया जाता है।

कुन्डलनी साधना बाहुबल की साधना है। आप के साहस, आप के आत्म-विश्वास और आपकी सहन-शीलता की साधना है।

यदि हम कुण्डलिनी साधक की उपमा दे तो ऐसी होगी, जैसे एक वीर जवान अपने देश की रक्षा के लिये अपना सर्वस्व बलिदान करके सीना ताने, जान हथेली पर लिये खड़ा हो। वहीं एक साधारण साधक की उपमा ध्यान योगी की उपमा, नाम-जप करने वालों की उपमा, मात्र ऐसी है- जैसे एक समाज सुधारक की छवि होती है।

अब आपने फैसला करना है कि, आप को किस रास्ते पर चलना है। हमने जो जाना, जो पाया, जो समझा, वो आपके सामने रख दिया है। शब्दों का कभी अन्त नहीं होता, उदाहरणो की संख्या नहीं होती। समझाने वाले और समझने वाले पर निर्भर करता है कि, वो कितना समझा सकता है, और दूसरा कितना समझ सकता है। सभी बातों को लिख कर नहीं समझाया जा सकता।

रूद्रयामल में कुण्डलिनी-साधकों के लिये एक 'उदघाटन-कवच' दिया गया है जिसका श्रद्धा-पूर्वक पाठ करना साधकों के लिये अत्यन्त लाभप्रद माना गया है-

॥ उदघाटन-कवच ॥

मूलाधारे स्थिता देवि, त्रिपुरा चक्र नायिका ।
नृजन्म भीति-नाशार्थं, सावधाना सदाऽस्तु ॥1॥
स्वाधिष्ठानाख्य चक्रस्था, देवी श्रीत्रिपुरेशिनी ।
पशु बुद्धिं नाशयित्वा, सर्वैश्वर्य प्रदाऽस्तु मे ॥2॥
मणिपुरे स्थिता देवी, त्रिपुरेशीति विश्रुता ।
स्त्री जन्म-भीति नाशार्थं, सावधाना सदाऽस्तु ॥3॥
स्वस्तिके संस्थिता देवी, श्रीमत्-त्रिपुर सुन्दरी ।
शोक भीति परित्रस्तं, पातु मामनघं सदा ॥4॥
अनाहताख्या निलया, श्रीमत्-त्रिपुर वासिनी ।
अज्ञान भीतितो रक्षां, विदधातु सदा मम ॥5॥
त्रिपुरा श्रीरिति ख्याता, विशुद्धाख्या स्थल स्थिता ।

जरोद्-भव भयात् पातु, पावनी परमेश्वरी ॥6॥
आज्ञा चक्र स्थिता देवी, त्रिपुरा मालिनी तु या ।
सा मृत्यु भीतितो रक्षां, विदधातु सदा मम ॥7॥
ललाट पदम् संस्थाना, सिद्धा या त्रिपुरादिका ।
सा पातु पुण्य सम्भूतिर्-भीति-संघात् सुरेश्वरी ॥8॥
त्रिपुराम्बेति विख्याता, शिरः पद्मे सु-संस्थिता ।
सा पाप भीतितो रक्षां, विदधातु सदा मम ॥9॥
ये पराम्बा पद स्थान गमने, विघ्न सञ्चयाः ।
तेभ्यो रक्षतु योगेशी, सुन्दरी सकलार्तिहा ॥10॥

कुण्डलिनी जगरण के यों तो अनेकों उपाय हैं, किन्तु बाबा जी द्वारा रचित ये गुरु-स्तोत्र अपने आप में एक अनुभुत प्रयोग है। कुण्डलिनी जगरण के इच्छुक साधक यदि स-स्वर इस स्तोत्र का लगातार पाठ करते हैं तो बहुत ही जल्दी कुण्डलिनी जगरण होने लगेगी और साधकों को कुण्डलिनी जगरण के अनूठे अनुभव होने लगेंगे।

॥ गुरु-स्तोत्र ॥
॥ ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥ ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥
दायें गुरु है, बायें गुरु है । आगे गुरु है, पीछे गुरु है ॥
ऊपर गुरु है, नीचे गुरु है । अंदर गुरु है, बाहर गुरु है ॥
ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥ ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥1॥

अंड में गुरु है, पिंड में गुरु है । जल में गुरु है, थल में गुरु है ॥
पवन में गुरु है, अनल में गुरु है । नभ में गुरु है, अंतर में गुरु है ॥
ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥ ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥2॥

तन में गुरु है, मन में गुरु है । घर में गुरु है, वन में गुरु है ॥
मंत्र में गुरु है, में यंत्र गुरु है । तंत्र में गुरु है, माला में गुरु है ॥
ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥ ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥3॥

धूप में गुरु है, दीप में गुरु है । फूल में गुरु है, फल में गुरु है ॥
भोग में गुरु है, पूजा में गुरु है । लोक में गुरु है, परलोक में गुरु है ॥
ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥ ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥4॥

जप में गुरु है, तप में गुरु है । हठ में गुरु है, यज्ञ में गुरु है ॥
जोग में गुरु है, में योग गुरु है । ज्ञान में गुरु है, ध्यान में गुरु है ॥
ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥ ॐ गुरु ॐ ॐ गुरु ॐ ॥5॥

॥ ॐ तत्सत् ॥